NOVATEUR PUBLICATIONS
JournalNX- A Multidisciplinary Peer Reviewed Journal
ISSN No: 2581 - 4230
VOLUME 7, ISSUE 8, Aug. -2021

नंधौर अपवाह बेसिन (कुमाऊँ हिमालय) के स्थलरूपों का भौगोलिक अध्ययन

[1]मनोज कुमार, [2]प्रो0 आर0 के0 पाण्डे

[1]शोध छात्र, भूगोल विभाग, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, डी0 एस0 बी0 परिसर, नैनीताल
[2]प्रोफेसर, भूगोल विभाग, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, डी0 एस0 बी0 परिसर, नैनीताल

प्रस्तावना—

भू-आकृतियाँ पृथ्वी की सतह के विशिष्ट स्थलरूप होती हैं जो अपरदन, विकृतीकरण और निक्षेपण (स्ट्राहलर और स्ट्राहलर,1996) की प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा निर्मित होती हैं। भू-आकृतियाँ भूगर्भिक और भू-आकृति संबंधी प्रक्रियाओं का परिणाम हैं जो पृथ्वी के धरातल पर निरंतर घटित होती रहती हैं। यदि धरातल के उच्चावच का अवलोकन किया जाए तो यह प्रतीत होता है कि धरातल के उच्चावच एवं स्थलरूप स्थिर और अपरिवर्तनशील हैं। लेकिन यदि सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन किया जाए तो धरातल के इन उच्चावचों और स्थलरूपों की परिवर्तनशीलता समय के साथ स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। क्योंकि "परिवर्तन प्रकृति का नियम है"। पृथ्वी के आन्तरिक भाग में क्रियाशील शक्तियों को अन्तर्जात बल कहा जाता है। इन्हीं क्रियाशील आन्तरिक शक्तियों द्वारा धरातल पर उच्चावचीय विषमता का सूत्रपात होता है एवं विभिन्न प्रकार के स्थलरूपों का निर्माण और विकास होता है। इन्हीं आन्तरिक शक्तियों तथा विभिन्न प्रकार के संचलनों से उत्पन्न भौमिकीय स्वरूपों (जैसे— चटकनें (Cracks(, (Fracture) एवं भ्रंश (Fault) आदि के द्वारा भू-आकृतियों के उद्भव और उनके विकास को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं। इस प्रकार यदि अन्तर्जात बल धरातल पर असमानता तथा विषमताओं की उत्पत्ति करते हैं तो वहीं बहिर्जात बल भूतल पर उत्पन्न इन विषमताओं को नष्ट करने का प्रयास निरंतर करते रहते हैं। इस तरह बहिर्जात बल समतल स्थापक बल होते हैं । यदि अन्तर्जात बलों द्वारा भूपटल पर विषमताओं का सृजन आकस्मिक हो जाता है तो बहिर्जात बलों को इन विषमताओं को दूर करने के लिये दीर्घ काल तक प्रयास करना पड़ता है। बहिर्जात बलों का प्रमुख कार्य अनाच्छादन)Denudation) होता है।

स्थिति एवं विस्तार—

नंधौर अपवाह बेसिन कुमायूँ हिमालय की शिवालिक एवं लघु हिमालय की श्रेणियों के मध्य स्थित है। नंधौर जल विभाजक क्षेत्र का अक्षांशीय विस्तार 29^0 5' 30" उत्तर से 29^0 17' 30" उत्तरी अक्षांश तक और देशांतरीय विस्तार 79^0 40' 30" पूर्व से 79^0 57' 15" पूर्वी देशांतर के मध्य तक विस्तृत है राजनीतिक और प्रशासनिक दृष्टि से नंधौर जलविभाजक क्षेत्र उत्तराखण्ड राज्य के नैनीताल और चम्पावत (कुछ भाग) जिलों में स्थित है । नंधौर जलविभाजक का क्षेत्रफल 272.50 वर्ग किमी0 है। USGS के अंकीय उच्चावच मॉडल (DEM) से प्राप्त उच्चावचीय आँकड़ों के आधार पर इस जलविभाजक क्षेत्र की न्यूनतम ऊँचाई 362 मीटर तथा अधिकतम ऊँचाई 2126 मीटर है। नंधौर अपवाह बेसिन की भौगोलिक अवस्थिति को चित्र— 1.1 में प्रदर्शित किया गया है।

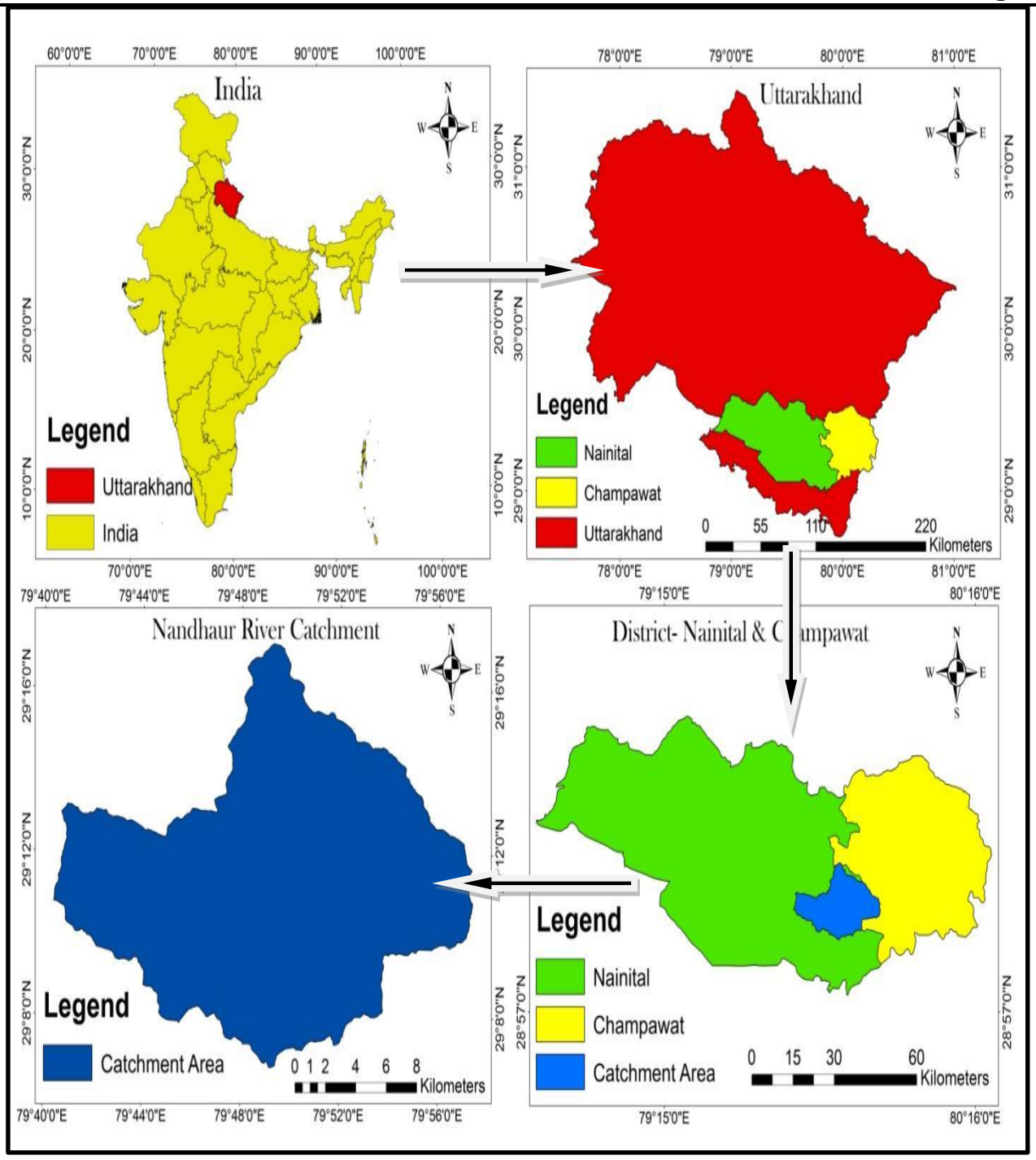

संख्या चित्र—1.1

नंधौर सरिता अपवाह बेसिन में पाये जाने वाली स्थलाकृतियां विभिन्न प्रकार के प्रक्रमों जैसे—अपरदनात्मक, परिवहनात्मक एवं निक्षेपणात्मक के कार्यों का परिणाम हैं। नंधौर अपवाह क्षेत्र की संरचना वहाँ घटने वाली विवर्तनिक घटनाओं एवं अनच्छादनात्मक प्रक्रमों ध्यान में रखते हुए इस जलागम क्षेत्र में पायी जाने वाले स्थलरूपों का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है। अध्ययन क्षेत्र में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के स्थलरूपों को तालिका संख्या—1.1 में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या—

स्थलरूप(उत्पत्ति प्रक्रमों के आधार पर)	भू-आकृतिक स्थलरूप
1. संरचनात्मकस्थलरूप	स्थलानुरेख
	अपनति व अभिनति
	अन्त:पर्वतीय घाटी
	कटक
2. अपक्षयात्मक स्थलरूप	भू-स्खलन
	भग्नाश्म राशि
	टैलस शंकु
	टैलस पंख
3. अपरदनात्मक स्थलरूप	अत्यधिक विच्छेदित पहाड़ियाँ एवं घाटियाँ
	आंशिक रूप से विच्छेदित पहाड़ियाँ एवं घाटियाँ
	जलप्रपात
	नदी वेदिकायें
4. निक्षेपणात्मकस्थलरूप	सक्रिय बाढ़कृत मैदान
	जलोढ़ शंकुजलोढ़ पंख
	पर्वतपदीय जलोढ़ मैदान
	प्राचीन बाढ़कृत मैदान
	जलधारा द्वीप
	प्वाइंट बार
	पार्श्ववर्ती जमाव

संरचनात्मकस्थलरूप—

विवर्तनिक संचलनों एवं उनके द्वारा उत्पन्न भौमिकीय रूपों (जैसे- भ्रंश,वलन आदि) का स्थलाकृतियों के उद्भव विकास और उनकी विशेषताओं पर इतना अधिक प्रभाव पड़ता है। विवर्तनिकी तथा स्थलरूपों और संरचना एवं स्थलरूपों के मध्य सम्बन्धों को इंगित करने के लिये कई नामावलियों का प्रयोग किया जाता है, जैसे— संरचनात्मक भूआकारिकी, विवर्तनिक भूआकारिकी, विवर्तनिक स्थलरूप आदि। संरचनात्मक भौमिकी का सम्बन्ध भूपर्पटी की लघु संरचनाओं से सम्बन्धित होता है। जैसे— अपनति, अभिनति, नतिलम्ब कटक व घाटी, भ्रंश एवं सन्धियाँ, चट्टानी वेदिका आदि।

I. स्थलानुरेख— स्थलानुरेख भूदृश्य में एक रेखिक विशेषता होती है जो एक अंतर्निहित भूवैज्ञानिक संरचना जैसे कि एक भ्रंश की अभिव्यक्ति है। सामान्यतया स्थलानुरेख एक रेखा के रूप में यह एक भ्रंशित घाटी, भ्रंश की एक श्रृंखला या वलन संरेखित पहाड़ियां आदि विशेषताओं का सम्मिश्रण होता है। इस प्रकार स्थलानुरेख किसी भूदृश्य में, अंतर्निहित भूगर्भीय संरचना जैसे कि भ्रंश के प्रभाव से निर्मित एक रेखीय आकृति होती है। भौमिकीय संरचनाओं की कुल लम्बाई लगभग 481.89 किमी0 है। जिसमें सूक्ष्म स्थलानुरेखों की कुल लम्बाई 390.70 संरचनात्मक स्थलानुरेख (भ्रंश) की कुल लम्बाई 54.72 किमी0,रामगढ़ उत्क्रम (RAMGARH THRUST) की कुल लम्बाई 11.91 किमी0 और मुख्य सीमा भ्रंश (MBT) की कुल लम्बाई 22.57 किमी0 के लगभग है (चित्र संख्या—1.2)।

II. अपनति व अभिनति— विवर्तनिकी संचलन के कारण भारतीय प्लेट का यूरेशियन प्लेट के नीचे निरन्तर क्षेपण हो रहा है। जिसके कारण भू-पटल में उत्पन्न क्षैतिज संचलन के संपीडन (compression) के कारण अवसादी चट्टानों में उत्पन्न वलन का जो भाग ऊपर उठ जाता है उसे अपनति एवं संपीडन के कारण वलन का जो भाग मुड़कर धँस जाता है उसे अभिनति कहते हैं। अध्ययन क्षेत्र में उत्तरी भाग की अपेक्षा दक्षिणी भाग की शिवालिक श्रेणी में इस प्रकार की

संरचना स्पष्ट रूप से दिखायी देती है। कालान्तर में इन्हीं अभिनतियों में सरिताओं द्वारा किये गये अपरदन से V आकार की घाटियों का विकास होता है।

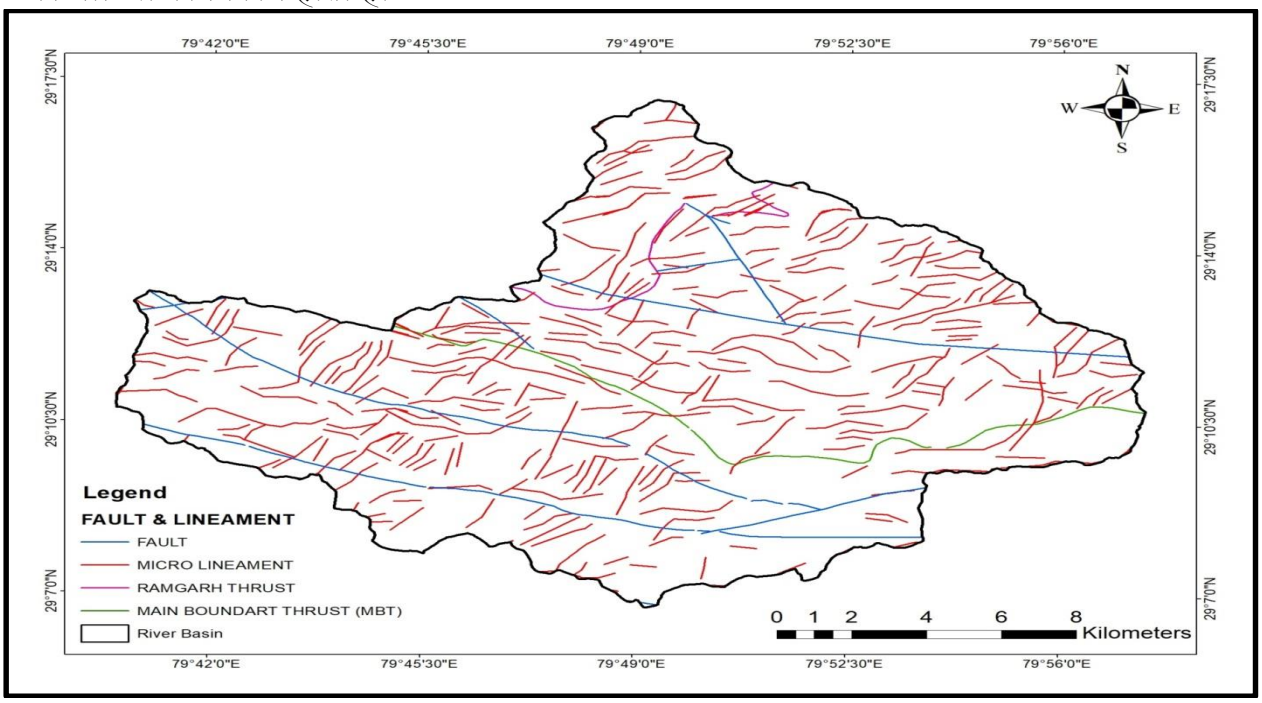

चित्र संख्या—1.2

III. अन्त:पर्वतीय घाटियाँ— पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य स्थित एक लम्बी एवं विस्तृत मध्यम ढाल वाली घाटी होती हैं जो आंशिक रूप से जलोढ़ से भरी हुई होती है। यह सरिता अपरदन द्वारा विकसित होती है। अन्त:पर्वतीय घाटियों में ऊपरी क्षेत्रों से परिवहन कर लायी गयी मिट्टियाँ होती है (चित्र संख्या—1.3)।

IV. कटक— जब कोई स्थलखंड वलन अथवा भ्रंशन क्रिया के कारण एक मेहराब के रूप में ऊपर उठ जाता है तो इस लम्बी एवं संकरी पहाड़ी अथवा पहाड़ियों की भौगोलिक विशेषता वाली श्रृंखला को कटक कहते हैं। इनकी उत्पत्ति में चट्टानों के स्तरों में वलन का सर्वाधिक योगदान होता है इनके पार्श्ववर्ती भाग प्राय: तीव्र ढाल वाले होते हैं। अध्ययन क्षेत्र में कटकों की कई श्रृंखलाऐं पायी जाती हैं नंधौर अपवाह बेसिन के लगभग 2.01 वर्ग किमी0 भू-भाग पर कटकों का विस्तार पाया जाता है।

II. अपक्षयात्मक स्थलरूप—

अपक्षय एक महत्वपूर्ण भू-आकृतिक प्रक्रियाओं में से एक है। अपक्षय की प्रक्रिया तब क्रियाशील हो जाती है जब पृथ्वी की सतह में स्थित चट्टानों के शीर्ष और निक्षेपित अवसादों, भौतिक, रासायनिक और जैविक कारकों के संपर्क में आते हैं, अपक्षय के प्रक्रम चट्टानों के उद्भव के समय से ही क्रियाशील हो जाते हैं। जिन प्रक्रियाओं द्वारा चट्टानें अपने स्थान पर टूटती-फूटती (disintegration) रहती हैं अथवा रासायनिक परिवर्तन द्वारा उनका क्षय (decay) होता है। इस प्रक्रिया को अपक्षय या ऋतुक्षरण कहते हैं। अपक्षय की प्रक्रियाओं का सम्बन्ध धूप, तापक्रम, पाला, वर्षा आदि जलवायु-तत्वों से है। इन जलवायु-तत्वों की सहायता से चट्टानों का विच्छेदन अथवा विखंडन (disintegration) और विघटन (decomposition) होता रहता है।

I. भू-स्खलन— अपक्षय या ऋतुक्षरण से उत्पन्न अपशिष्ट शैल के स्थानान्तरण या द्रव्यमान संचलन के सभी प्रकार को मृदा सहित सामूहिक रूप से भूमि-स्खलन कहते हैं। नंधौर सरिता अपवाह बेसिन के दक्षिण- पश्चिमी क्षेत्रों में शिवालिक श्रेणी, इसके अलावा पूर्वी उत्तर- पश्चिमी भागों में भू-स्खलन तीव्र गति से हो रहा है। भू-स्खलन प्रभावित क्षेत्रों से ही कई भ्रंश भी स्थित हैं । भू-स्खलन के अन्तर्गत अपवाह बेसिन के कुल क्षेत्रफल का लगभग 3.38 वर्ग किमी0 भू-भाग सम्मिलित है (चित्र संख्या—1.2)।

II. भग्नाश्म राशि या टैलस— अपक्षय के विभिन्न कारकों की क्रियाओं द्वारा पहाड़ों की ऊँची चोटियों पर खण्ड-विच्छेदन होने लगता है। पाले के कारण चट्टानें टूट कर छोटे-छोटे टुकड़ों में विखण्डित हो जाती हैं। विघटन एवं विखण्डन से उत्पन्न अपशिष्ट शैल जब सामूहिक संचलन के कारण पहाड़ी की पदस्थली (आधार) पर जमा होने वाले मलवा को भग्नाश्म राशि (scree) या टैलस (talus) कहते हैं।

III. टैलस शंकु— अपक्षय के भौतिक, रासायनिक एवं जैव कारकों द्वारा विघटिन एवं विखण्डित शैल पदार्थों को शैल अपशिष्ट (rock waste) कहा जाता है। शैल अपशिष्टों पहाड़ी ढाल के सहारे सामूहिक रूप से गतिशील होने की प्रक्रिया को द्रव्यमान संचलन (mass movement) कहते हैं। सामूहिक संचलन के कारण पहाड़ी की पदस्थली (आधार) पर जमा होने वाले मलवा को भग्नाश्म राशि (scree) एवं बड़े-बड़े बोल्डर के शंक्वाकार निक्षेप को टैलस शंकु कहते हैं। अपवाह क्षेत्र में इस प्रकार के कई टैलस शंकु पाये जाते हैं।

IV. टैलस पंख— भौतिक, रासायनिक एवं जैव प्रक्रमों द्वारा विघटिन एवं विखण्डित शैल पदार्थ गुरूत्वाकर्षण के कारण नीचे की ओर लुढ़कते हैं। यद्यपि टैलस पहाड़ों की ढाल पर स्थिर प्रतीत होते हैं, जब ऊपर से नयी चट्टानें टूट कर गिरती रहती हैं और अंत में निचली ढालों एवं पर्वतपदीय प्रदेशों में अपेक्षाकृत विस्तृत क्षेत्रों को ढ़क लेता है समय के साथ ये और भी पंख के समान प्रतीत होने लगते हैं इस प्रकार टैलस से निर्मित पंख के समान दिखने वाली भू-आकृति को टैलस पंख कहा जाता है।

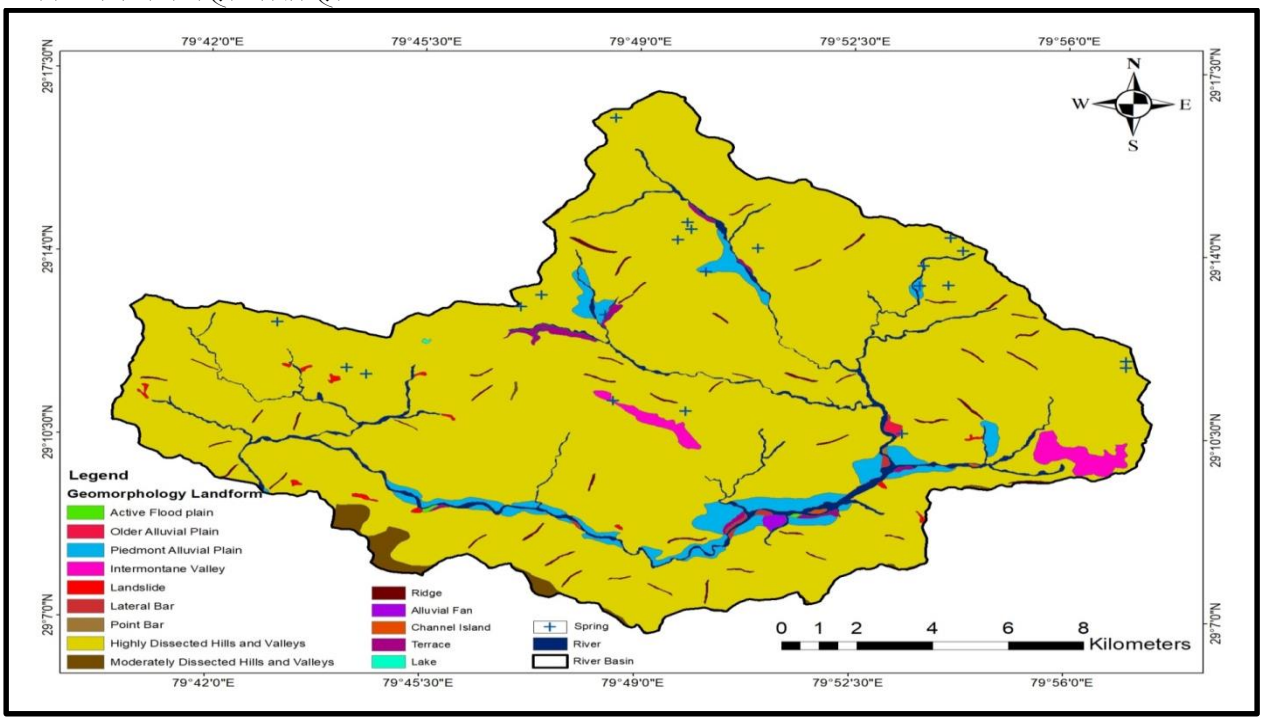

चित्र संख्या— 1.3

III. अपरदनात्मक स्थलरूप—

धरातल पर बहता हुआ जल भू-पृष्ठीय अपरदन का प्रमुख कारक है। इस प्रकार भूतल पर समतल स्थापक शक्तियों में बहते हुए जल (सरिता) का कार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। वर्षा का जल जो धरातल पर किसी न किसी रूप में बहता हुआ आगे की ओर प्रवाहित होता है उसे धरातलीय जल-प्रवाह (Overland flow) कहते हैं। धरातलीय जल-प्रवाह एवं नदियों के विभिन्न अवस्थाओं के कार्य जलीय प्रक्रमों के अन्तर्गत आते हैं। नदियाँ धरातल पर समतल स्थापक का कार्य तीन रूपों में सम्पन्न करती है जिसे त्रिपथ कार्य (three phase work) कहा जा सकता है। ये तीन कार्यों में— अपरदन (erosion(, परिवहन)transportation) एवं निक्षेपण (deposition) सम्मिलित हैं।

I. अत्यधिक विच्छेदित पहाड़ियाँ एवं घाटियाँ— अपवाह बेसिन क्षेत्र में नंधौर एवं उसकी सहायक नदियों द्वारा अपनी घाटी में तथा समीपी स्थलखण्ड पर अपरदन की क्रिया निरन्तर जारी है प्रत्येक स्थलरूप केवल एक ही अपरदन का प्रतिफल नहीं होता है बल्कि सभी प्रकर के अपरदन के सम्मिलित कार्य का प्रतिफल होता है। अपवाह क्षेत्र में प्रवाहित

होने वाली मुख्य नदी एवं उसकी सहयक नदियों द्वारा घाटियों एवं पहाड़ियों का अपरदन बड़े पैमाने पर किया है। जिसके कारण पहाड़ियों में लम्बवत् अपरदन के कारण गहरी V आकार की घाटियों की उत्पत्ति हुई है अत्यधिक विच्छेदित पहाड़ियों एवं घाटियों का यह रूप शिवालिक श्रेणी की अपेक्षा मध्य हिमालय क्षेत्र में अधिक दिखायी देता है।

II. आंशिक रूप से विच्छेदित पहाड़ियाँ एवं घाटियाँ— आंशिक रूप से विच्छेदित पहाड़ियों एवं घाटियों की स्थिति जलविभाजक की दक्षिणी सीमा के आस-पास शिवालिक श्रेणी में दिखायी देती है। इस क्षेत्र में कई स्थानीय भ्रंश पाये जाते हैं। इस भाग में मियोसीन-प्लायोसीन युग के रेतीली मिट्टी के पतले अंतःक्षेपण के साथ बलुआ पत्थर और मियोसीन युग के बलुआ पत्थर, सिल्टस्टोन, क्लेस्टोन के साथ कांग्लोमरेट के निक्षेप पाये जाते हैं।

III. जलप्रपात— जब किसी स्थान पर नदियों का जल पर्याप्त ऊँचाई से ऊर्ध्वाधर ढाल अर्थात क्लिफ के ऊपरी भाग से अत्यधिक वेग से नीचे की ओर गिरता है तो इसे जलप्रपात कहते हैं । नंधौर अपवाह बेसिन में जलप्रपात के अलावा कई छोटे झरने भी स्थित हैं।

IV. नदी वेदिकायें— नदी की घाटी के दोनों ओर एक समतल व थोड़ी ऊँची-नीची सतह वाली सोपानाकर वेदिकायें मिलती हैं जिन्हें नदी वेदिकायें कहते हैं। इन वेदिकाओं का नदी की ओर का भाग तीव्र ढाल वाला होता है। नदी की ओर वाले पार्श्व भाग में अपरदन अधिक होने के कारण इसमें खड्ड बन जाते हैं। वास्तव में नदी वेदिकायें प्रारम्भिक बाढ़ के मैदान के अवशिष्ट चिह्न होते हैं नदी वेदिकायें नदी के अपरदन द्वारा उत्पन्न होती हैं न कि उसके निक्षेप द्वारा (गिलबर्ट,1877)।

IV. निक्षेपणात्मक स्थलरूप—

जलीय (Fluvial) या नदीकृत शब्दों का उपयोग भूगोल और भू-विज्ञान में नदियों और जलधाराओं के निक्षेपण से सम्बन्धित प्रक्रियाओं एवं उनके द्वारा निर्मित भू-आकृतियों को संदर्भित करने के लिए किया जाता है। जिसमें नदी के तल पर तलछट की गति और अपरदन या निक्षेपण सम्मिलित हैं। जलीय स्थलरूप पृथ्वी की सतह पर जलीय प्रक्रियाओं से जुड़े होते हैं। मृदा, चट्टान चूर्ण और तल शैल के टुकड़े जो कि मूल चट्टान से बने होते हैं, जिसे जलीय कारकों (fluvial agents) द्वारा परिवहित करके अन्य स्थनों पर निक्षेपित किया जाता है । और इस प्रकार जलीय भ्वाकृतिक प्रक्रम द्वारा सतह पर निक्षेपित स्थलाकृतियों का एक अलग समूह विकसित होता है जैसे— सक्रिय बाढ़कृत मैदान, जलोढ़ शंकु, जलोढ़ पंख, पर्वतपदीय जलोढ़ मैदान, प्राचीन बाढ़कृत मैदान, पार्श्ववर्ती जमाव, प्वाइंट बार जलधारा द्वीप आदि।

I. जलोढ़ शंकु— जब पर्वतीय ढाल तीव्र एवं मलबे की मात्रा अधिक होती है छोटी नदियाँ पहाड़ी भागों से से निकलती हैं। लेकिन उनमें प्रवाहित जल की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती है तो सरिता जल के साथ परिवहित होने वाले जलोढ़क)alluvial) जल के साथ अधिक दूरी तक प्रवाह नहीं कर पाते हैं तो ये जलोढ़क पर्वतपदीय भाग में सीमित क्षेत्र में शंकु के आकार में निक्षेपित हो जाते हैं तो इस प्रकार के जमाव को जलोढ़ शंकु कहते हैं । जलोढ़ शंकु अपेक्षाकृत अधिक ऊँचे व तीव्र ढाल युक्त होते हैं। ये गोलाश्म (boulder(, बजरी, रेत, मिट्टी आदि के मिश्रण से निर्मित होते हैं ।

II. जलोढ़ पंख— जब नदी पहाड़ी भाग से नीचे मैदानी भाग में प्रवेश करती है तो उसके प्रवाह वेग में कमी आने के कारण परिवहन शक्ति में कमी आने लगती है जिसके कारण नदी के प्रवाहित होने वाले गोलाश्म (boulder(, कंकड़-पत्थर, बालू, मिट्टी आदि सर्वप्रथम पर्वतपदीय भाग में निक्षेपित होने लगते हैं और इसके बीच से नदी की अनेक पतली धारायें प्रवाहित होती रहती हैं। इस प्रकार के अर्द्ध वृताकार निक्षेप को जलोढ़ पंख कहा जाता है। नंधौर अपवाह बेसिन में कई स्थानों में जहाँ सहायक सरिताऐं व मौसमी जलधाराऐं अपनी मुख्य सरिताओं से मिलती हैं वहाँ पर जलोढ़ पंख स्थलाकृति स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं।

III. पर्वतपदीय जलोढ़ मैदान— जलोढ़ पंखों में धीरे-धीरे विस्तार व विकास होता रहता है और जब इन जलोढ़ पंखों का पार्श्ववर्ती विस्तार अधिक हो जाता है तो एक से अधिक जलोढ़ पंखे आपस मे मिल जाते हैं और इन पंखों के मिलने से विस्तृत जलोढ़ निक्षेप के मैदान की उत्पत्ति होती है जिसे पर्वतपदीय जलोढ़ मैदान कहा जाता है। नंधौर सरिता अपवाह क्षेत्र के अन्तर्गत पर्वतपदीय जलोढ़ मैदान का विस्तार लगभग 8.64 वर्ग किमी0 भू-भाग पर पाया जाता है।

IV. सक्रिय बाढ़कृत मैदान— सक्रिय बाढ़ के मैदान को एक धारा/नदी के दोनों ओर स्थित एक क्षेत्र के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें प्रतिवर्ष नियमित रूप से समय-समय पर बाढ़ आती रहती है और यह क्षेत्र हर वर्ष जलमग्न होते हैं। अध्ययन क्षेत्र में इन सक्रिय बाढ़ के मैदानों के अन्तर्गत का लगभग 0.07 वर्ग किमी0 भू-भाग सम्मिलित है। सक्रिय बाढ़ के मैदानों में अपवाह बेसिन के कुल क्षेत्रफल का लगभग 0.03 प्रतिशत भाग प्रभावित है।

V. पुरातन जलोढ़ मैदान—नदी द्वारा निर्मित अपेक्षाकृत ऊँचे पुरातन जलोढ़क मैदान जिनकी उत्पत्ति नदियों द्वारा लाये गये जलोढ़कों के निक्षेपण से हुई है, ऐसे मैदान पुरातन जलोढ़ मैदान कहलाते हैं। पुरातन जलोढ़क मैदान सामान्य बाढ़ के मैदानों की अपेक्षा अधिक ऊँचाई पर स्थित होते हैं जिसके कारण वर्तमान समय में नदियों में आने वाली बाढ़ का पानी ऊंचाई के कारण इन मैदानों तक नहीं पहुंच पाता है। अत: यहाँ पुरानी काप (जलोढ़) मिट्टी पायी जाती है। नंधौर अपवाह क्षेत्र के अन्तर्गत पुरातन जलोढ़क मैदान का विस्तार लगभग 0.19 वर्ग किमी0 भू-भाग पर पाया जाता है।

VI. बिन्दु रोधिका— बिन्दु रोधिका जलोढ़ से बनी एक निक्षेपण विशेषता है नदी विसर्प के प्रत्येक मोड़ में दो प्रकार के किनारे होते हैं। एक किनारे का ढाल अवतल होता है इस पर नदी की धारा के सीधे टकराने कारण कटाव अधिक होता है इस किनारे के दूसरी ओर उत्तल ढाल वाला किनारा होता है इस किनारे पर निक्षेप होता है इसका ढाल मन्द होता है जिसे स्कन्ध (विस्तारित) ढाल (slip of slope) कहते हैं। बिन्दु रोधिका धाराओं और नदियों के अंदरूनी मोड़ या स्कन्ध (विस्तारित) ढाल (slip of slope) पर निक्षेपित हो जाती है। बिन्दु रोधिका परिपक्व या घुमावदार धाराओं में बहुतायत में पाए जाते हैं इन बिन्दु रोधिका की आकृति अर्ध-चंद्राकार होती है। इनके निर्माण में रेत, बजरी और छोटे पत्थरों, गाद आदि का योगदान होता है।

VII. जलमार्ग द्वीप— नदियों द्वारा अपने साथ बहाकर लाये गये पदार्थों के नदी की जलधारा के मध्य निक्षेपण लम्बी रोधिकाओं के रूप में हो जाता है। तो नदी की धारा दो शाखाओं विभाजित हो जाती है और यह प्रवाह नदी के किनारों पर क्षैतिज अपरदन करने लगता है । नदी घाटी की चौड़ाई बढ़ने और जल आयतन कम होने से प्रवाहित जलोढ़ अधिक मात्रा में क्षैतिज अवरोध के रूप में किसी द्वीप की भाँति निक्षेपित हो जाते हैं । इस प्रकार इन जलमार्ग द्वीपों की उत्पत्ति होती है। जलमार्ग द्वीपों की निर्माण में बजरी, बालू, मिट्टी आदि पदार्थों का मुख्य रूप से योगदान होता है। अपवाह क्षेत्र में इन निक्षेपित जलमार्ग द्वीपों कुल क्षेत्रफल लगभग 0.08 वर्ग किमी0 है जो कुल क्षेत्रफल का 0.03 प्रतिशत है।

VIII. पार्श्ववर्ती रोधिका— जब नदी के प्रवाह मार्ग की वक्रता कम होती है और नदी का प्रवाह वेग मध्य भाग की अपेक्षा पार्श्ववर्ती भाग में मन्द होता है तब नदी के पार्श्ववर्ती भागों पर प्रवाहित जल द्वारा लाये गये तलछटों के निक्षेपण से इन पार्श्ववर्ती रोधिकाओं की उत्पत्ति होता है। पार्श्ववर्ती रोधिकाओं की सतह सामान्यत: जलमार्ग की ओर ढलान वाली होती है पार्श्व या तिरछी अभिवृद्धि प्रक्रियाओं द्वारा निक्षेपित भार सामग्री जैसे— महीन बजरी,बालू एवं मिट्टी के जमाव के कारण पार्श्ववर्ती रोधिकाओं का निर्माण होता है। नंधौर अपवाह क्षेत्र में इन पार्श्ववर्ती रोधिकाओं का विस्तार लगभग 0.27 वर्ग किमी0 भू-भाग पर पाया जाता है । जिसके अन्तर्गत अपवाह बेसिन के कुल क्षेत्रफल का लगभग 0.1 प्रतिशत भाग सम्मिलित हैं (चित्र संख्या—1.3) ।

REFERENCES:

1) Bull, William B. (2007): Tectonic Geomorphology of Mountains: A New Approach to Paleoseismology, Blackwell Publishing Ltd
2) Burrough, P. A. vanGaans, P. F., MacMillan, R. A. (2000): High resolution landform classification using fuzzy *k*-means. Fuzzy Sets and Systems.
3) Dikau, R. (1989): The application of a digital relief model to landform analysis in geomorphology, In: Raper, J. (Ed.), Three Dimensional Applications in Geographical Information Systems, Taylor and Francis, London.
4) Gutiérrez, Francisco. Mateo Gutiérrez (2016): Landforms of the Earth (eBook), Springer International Publishing Switzerland.
5) Singh, S. (2009): Geomorphology, Vashundhara Prakashan, Gorakhpur.
6) Wilson, J. P. Gallant, J. C. (2000): Terrain Analysis: Principles and Applications, Wiley, New York.